[2019] 18 एस.सी.आर. 957

अद्वितीय सामान्य वित्त

एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लि.

बनाम

आयकर आयुक्त

(2007 की सिविल अपील संख्या 1265)

जुलाई 09, 2019

[आर। एफ. नरीमन और संजीव खन्ना, जे.जे.]

आयकर अधिनियम, 1961 - निर्धारण वर्ष 1985-86 और 1986-97 - सामूहिक निवेश योजना के तहत बड़े पैमाने पर जनता से प्राप्त सदस्यता - पूंजीगत प्राप्तियों और राजस्व प्राप्तियों के बीच अंतर - निर्धारिती-कंपनी द्वारा शुरू की गई योजना जिसके तहत ग्राहकों को सदस्यता के माध्यम से राशि जमा करने की आवश्यकता होती है, और, योजना के अंत में, सब्सक्राइब की गई राशि को ब्याज के साथ चुकाया गया था - योजना में ज़ब्ती खंड भी शामिल था - विवाद कि क्या निर्धारिती-कंपनी के हाथों में सदस्यता की प्राप्तियों को आय या पूंजीगत प्राप्तियों के रूप में माना जाना चाहिए - माना गया: जमा की गई राशि सदस्यता के माध्यम से निर्धारिती-कंपनी पूंजीगत प्राप्तियां हैं क्योंकि उन्हें योजना के अनुसार जमाकर्ताओं को ब्याज के साथ चुकाना पड़ता है - यदि ऐसी सदस्यता को आय माना जाता है, तो यह कंपनी अधिनियम का उल्लंघन होगा - हालांकि, राशि/सदस्यता बीच में ही जब्त कर ली जाती है -रास्ता निर्धारिती-कंपनी के हाथों में आय या राजस्व प्राप्तियां बन जाएगा।

आयकर अधिनियम, 1961 - निर्धारण वर्ष 1985-86 और 1986-97 - निर्धारिती-कंपनी द्वारा शुरू की गई सामूहिक निवेश योजना के तहत बड़े पैमाने पर जनता से प्राप्त सदस्यता - विवादास्पद मूल्यांकन वर्षों के लिए राजस्व प्राप्तियों के रूप में सदस्यता राशि का उपचार - माना गया: सही नहीं है - सदस्यता पर प्राप्त राशियाँ पूंजीगत प्राप्तियाँ हैं और विवादित मूल्यांकन वर्षों में कोई ज़ब्ती नहीं होने के कारण, विचाराधीन राशियों को पूंजीगत प्राप्तियाँ माना जाना चाहिए।

आयकर - खाता बही - प्राप्तियों की प्रकृति - बहीखाता प्रविष्टियाँ, चाहे निर्णायक या प्रविष्टियों की वास्तविक प्रकृति का निर्धारक - माना गया: केवल बहीखाता प्रविष्टियाँ प्राप्तियों /

लेनदेन की वास्तविक प्रकृति का निर्धारण नहीं करेंगी - "सैद्धांतिक" और "व्यावसायिक" प्राप्तियों/लेनदेन के पहलुओं में अंतर - तथ्यों के आधार पर, निर्धारिती-कंपनी द्वारा शुरू की गई सामूहिक निवेश योजना के तहत बड़े पैमाने पर जनता से सदस्यता प्राप्त की गई थी - लेनदेन का "सैद्धांतिक" पहलू यह था कि निर्धारिती ने सदस्यता प्राप्तियों को आय के रूप में माना था - की वास्तविकता हालाँकि, स्थिति यह है कि मामले के व्यावसायिक पहलू को, जब समग्र रूप से देखा जाता है, तो अनिवार्य रूप से यह निष्कर्ष निकलता है कि विचाराधीन प्राप्तियाँ पूंजीगत प्राप्तियाँ थीं और आय नहीं - इस प्रकृति के मामलों में अकेले जाना संभव नहीं होगा निर्धारिती के हाथों में ऐसी सदस्यताओं के उपचार द्वारा - लेन-देन का चरित्र स्पष्ट रूप से निर्धारिती के हाथों में एक पूंजीगत रसीद होने के कारण संभवतः निर्धारिती के हाथों में आय के रूप में कर नहीं लगाया जा सकता है।

सिद्धांत/सिद्धांत - रोक का सिद्धांत - निर्धारिती-कंपनी द्वारा शुरू की गई सामूहिक निवेश योजना के तहत बड़े पैमाने पर जनता से प्राप्त सदस्यता - निर्धारिती ने अपने खातों की पुस्तकों में इस राशि को आय के रूप में दिखाया - हालांकि, कानून में वास्तविक स्थिति, सदस्यता द्वारा की गई जमा राशि है कि वे पूंजीगत प्राप्तियों की प्रकृति में हैं - माना गया: कानून में तय स्थिति के खिलाफ कोई रोक नहीं हो सकती है - इसे देखते हुए, निर्धारिती कंपनी को यह दावा करने से नहीं रोका जा सकता है कि सदस्यता राशि पूंजीगत प्राप्तियों की प्रकृति में थी। - आयकर.

पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड और अन्य बनाम भारतीय रिजर्व बैंक (दूसरा पीयरलेस केस), **(1992) 2 एससीसी 343: [1992] 1 एससीआर 406***; पूना इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड, बॉम्बे बनाम आयकर आयुक्त, बॉम्बे* **एआईआर 1966 एससी 30: [1965] 3 एससीआर 818;** *आयकर आयुक्त, बॉम्बे बनाम सी. पारख एंड कंपनी (इंडिया) लिमिटेड* **29 आईटीआर 661***; आयकर आयुक्त, मद्रास बनाम वी.एमआर.पी. फर्म, मुआर* **(1965) 56 आईटीआर 67***; आयकर आयुक्त बनाम सहारा इन्वेस्टमेंट इंडिया लिमिटेड* **वॉल्यूम 266 आईटीआर 641 - पर आधारित।**

राम जानकी देवी और अन्य बनाम मेसर्स जुग्गीलाल कमलापत **(1971) 1 एससीसी 477 - प्रतिष्ठित।**

भारतीय रिज़र्व बैंक बनाम पीयरलेस जनरल फाइनेंस और इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड और अन्य **(1987) 1 एससीसी 424: [1987] 2 एससीआर 1 - संदर्भित.**

केस कानून संदर्भ

[1992] 1 एससीआर 406 पैरा 3 पर निर्भर था

(1971) 1 एससीसी 477 ने पैरा 6 को प्रतिष्ठित किया

[1965] 3 एससीआर 818 पैरा 6 पर निर्भर था

[1987] 2 एससीआर 1 पैरा 9 को संदर्भित करता है

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 1265 2007 का.

2005 के आईटीआर नंबर 1 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के दिनांक 06.10.2005 के निर्णय और आदेश से।

एस. गणेश, अभिजीत चटर्जी, वरिष्ठ वकील, एस. सुकुमारन, आनंद सुकुमार, समीर रोहतगी, भूपेश कुमार पाठक, सुश्री मीरा माथुर, के. राजीव, सलाहकार। अपीलकर्ता के लिए।

अरिजीत प्रसाद, वरिष्ठ वकील, एस.ए. हसीब, बी. वी. बलराम दास, श्रीमती अनिल कटियार, वकील। प्रतिवादी के लिए।

अदालत का फैसला **आर. एफ. नरीमन, जे.** द्वारा सुनाया गया।

1 इस अपील में उठाया गया सवाल यह है कि क्या पिछले वर्षों के लिए निर्धारिती-कंपनी के हाथों में सदस्यता की रसीदें हैं मूल्यांकन वर्ष 1985-86 और 1986-97 से संबंधित प्रासंगिकता को आय के रूप में माना जाना चाहिए, न कि पूंजीगत प्राप्तियों के रूप में, क्योंकि निर्धारिती ने अपने खातों की पुस्तकों में इस राशि को आय के रूप में दिखाया है।

2। निर्धारिती-कंपनी ने विभिन्न योजनाएं शुरू की हैं जिसके लिए ग्राहकों को अपने हाथों में सदस्यता के माध्यम से कुछ राशि जमा करने की आवश्यकता होती है, और, विचाराधीन योजना के आधार पर, योजना के अंत में इन सदस्यता वाली राशियों को अंततः ब्याज के साथ चुकाया जाता है। मौजूदा योजना में ज़ब्ती खंड भी शामिल हैं, जिसके परिणामस्वरूप यदि, बीच में, एक निश्चित राशि जब्त हो जाती है, तो उक्त राशि तुरंत करदाता के हाथ में आय बन जाएगी। यह हमारे सामने एक स्वीकृत स्थिति है।

3. वर्तमान मामले में, निर्धारिती को प्रश्नगत दो वर्षों के लिए आय के रूप में ऐसी रकम को कर के दायरे में लाने के लिए कहा गया था, जबकि निर्धारण अधिकारी के अनुसार, उसने इसे माना था। संपूर्ण राशि को आय के रूप में, जिसमें से 3% प्रश्नगत वर्षों के लिए हमारे समक्ष

आय होने पर विवादित नहीं है। मूल्यांकन अधिकारी ने इन राशियों को आय के रूप में माना क्योंकि निर्धारिती द्वारा अपनाई गई लेखांकन प्रणाली के तहत, इन राशियों को आय के रूप में प्रश्नगत वर्षों के लिए लाभ और हानि खाते में जमा किया गया था। आयकर आयुक्त (अपील) ने मूल मूल्यांकन आदेशों से अपील को खारिज कर दिया और इसकी पुष्टि की। दूसरी ओर, आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण ने *पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड और अन्य बनाम भारतीय रिजर्व बैंक,* (1992) 2 एससीसी 343 में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए अपील की अनुमति दी, जिसके अनुसार, अपीलीय न्यायाधिकरण में, इस न्यायालय ने अंततः निर्धारिती के मामले में सवाल का फैसला करते हुए कहा कि ऐसी रकम को आय नहीं माना जा सकता है, लेकिन यह पूंजीगत प्राप्तियों की प्रकृति में है। ऐसा न केवल 1987 के आरबीआई परिपत्र की व्याख्या के कारण था, बल्कि इसलिए भी कि, सामान्य सिद्धांतों पर, ऐसी राशियों को पूंजीगत प्राप्तियां माना जाना चाहिए अन्यथा वे कंपनी अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करेंगे। इसने आगे चलकर योजना में निहित विभिन्न खंडों का अध्ययन किया, और पाया कि वास्तव में, कोई भी सदस्यता प्रमाणपत्र जब्त नहीं किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप यह स्पष्ट था कि किसी के हाथ में कोई आय नहीं होगी इन दो वर्षों के लिए निर्धारिती। यह उन प्रमाणपत्रों से भी निपटता है जो निर्धारित समय से पहले सरेंडर कर दिए गए थे, और कहा गया था कि ऐसे मामलों में भी निर्धारिती के हाथ में जो भी अधिशेष के रूप में रहेगा उसे आय के रूप में माना जाएगा। इसमें कहा गया है कि यह दावा करने वाले करदाता के खिलाफ कानून में कोई रोक नहीं होगी कि ये राशियाँ पूंजीगत प्राप्तियों की प्रकृति में थीं और आय नहीं थीं, और इस न्यायालय के प्रस्ताव को पुष्ट करने के लिए इस न्यायालय के कुछ निर्णयों पर भी भरोसा किया गया था। यह भी माना गया कि कानून में वास्तविक स्थिति क्या है, इस बात से ध्यान नहीं हटाया जा सकता कि निर्धारिती अपने खातों में मौजूद मामले के उपचार में क्या कर सकता है या क्या नहीं कर सकता है। ऐसा करने पर, आयकर आयुक्त के खिलाफ अपील को आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा अनुमति दी गई थी। पहले दौर में, उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 09.09.1999 द्वारा कहा कि चूँकि कानून का कोई प्रश्न नहीं उठता, इसलिए उसके समक्ष संदर्भ आवेदन खारिज कर दिए गए। इस न्यायालय ने, दिनांक 03.12.2002 के एक आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया और निम्नलिखित प्रश्नों को उच्च न्यायालय को भेज दिया:

> (ए) क्या *पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड बनाम भारतीय रिजर्व बैंक* (1992) 2 एससीसी 343 में सुप्रीम कोर्ट का फैसला कानून के एक पूर्ण प्रस्ताव के रूप में बताता है कि सदस्यता की सभी प्राप्तियां किसके हाथों में हैं? निर्धारण वर्ष 1985-

86 और 1986-87 से संबंधित पिछले वर्षों के लिए निर्धारिती को आवश्यक रूप से पूंजीगत प्राप्तियों के रूप में माना जाना चाहिए?

(बी) यदि पहले प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है, तो तथ्यों पर और मामले की परिस्थितियाँ, और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि निर्धारण वर्ष 1985-86 और 1986-87 के संबंध में दायर आय के रिटर्न में निर्धारिती द्वारा कराधान के लिए पहले वर्ष की सदस्यता को जानबूझकर राजस्व प्राप्ति के रूप में पेश किया गया था, क्या ट्रिब्यूनल था निर्धारिती के इस तर्क को स्वीकार करना उचित है कि पहले वर्ष की सदस्यता पूंजीगत प्राप्तियां थी और इसलिए कर योग्य नहीं है?

(सी) क्या तथ्यों और मामले की परिस्थितियों पर और माननीय सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए 15 मई, 1987 के भारतीय रिज़र्व बैंक के निर्देशों को 15 मई, 1987 से लागू किया गया था और यह केवल 15 मई, 1987 को या उसके बाद की गई जमाओं पर लागू होगा, न्यायाधिकरण को कानून के साथ-साथ उचित ठहराया गया था यह मानने के तथ्य कि भारतीय रिज़र्व बैंक के उक्त निर्देश पूर्वव्यापी थे और सभी लंबित कार्यवाहियों में लागू होने चाहिए?"

4. दिनांक 06.10.2005 के आक्षेपित निर्णय द्वारा, जब उच्च न्यायालय को भेजा गया, तो उच्च न्यायालय कलकत्ता ने अपीलीय न्यायाधिकरण के खिलाफ अपील की अनुमति देते हुए कहा कि अपीलकर्ता कंपनी की सदस्यता योजना के अवलोकन से पता चलेगा कि चूंकि जमा की गई राशि की जब्ती संभव है, इसलिए इस राशि को आय के रूप में माना जाना चाहिए, न कि पूंजीगत रसीद के रूप में। इसके अलावा, यह इस तथ्य पर बहुत अधिक निर्भर करता है कि निर्धारिती ने स्वयं ऐसी रकम को आय के रूप में माना था और उन्हें प्रश्नगत वर्षों के लिए अपने लाभ और हानि खाते में जमा किया था और इसलिए, उसे रोक दिया जाएगा। इस न्यायालय, अर्थात् *पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा)* के फैसले को पढ़ने पर यह कहा गया कि चूंकि उक्त निर्णय 1987 के आरबीआई परिपत्र से संबंधित था, जो स्वयं केवल संभावित था, किसी भी कानून को उस परिपत्र के खंड 12 का प्रभाव प्रकृति में संभावित होगा और इसलिए, प्रश्न में मूल्यांकन वर्षों पर लागू नहीं होगा।

5. श्री एस. गणेश, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, अपीलकर्ता-कंपनी की ओर से उपस्थित हुए। हमारे सामने तर्क दिया गया कि उच्च न्यायालय सभी मामलों में गलत है। उनके अनुसार, इस तथ्य को कि योजना की धाराओं के तहत जब्ती हो सकती है, एक अंतरिम आदेश के साथ पढ़ा

जाना चाहिए जिसे उन्होंने 05.04.2017 के एक पूरक हलफनामे के माध्यम से हमारे ध्यान में लाया है जिसमें यह स्पष्ट किया गया है कि, आदेश की तारीख यानी 03.09.1979 के बाद, अपीलकर्ता-कंपनी द्वारा किसी भी योजना के तहत कोई राशि जब्त नहीं की जा सकती। उन्होंने कहा कि, वास्तव में, पूरक हलफनामे में कहा गया है कि प्रश्नगत वर्षों के लिए और विशेष रूप से, 1979 के बाद के प्रत्येक वर्ष के लिए, कंपनी द्वारा प्रश्नगत किसी भी योजना के तहत वास्तव में कोई राशि जब्त नहीं की गई है। इसके बाद उन्होंने तर्क दिया कि केवल निर्धारिती की लेखा प्रणाली के अनुसार चलना गलत है क्योंकि यह अच्छी तरह से स्थापित है कि कानून में वास्तविक स्थिति, पहले सिद्धांत पर, सदस्यता द्वारा किए गए जमा से पता चलता है कि वे की प्रकृति में हैं पूंजीगत प्राप्तियां संभवतः आय नहीं कही जा सकतीं, क्योंकि वे योजना के ग्राहकों के लाभ के लिए होंगी और उन्हें योजना के अंत में ब्याज सहित वापस भुगतान करना होगा। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि, किसी भी घटना में, *पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा)* में निर्णय केवल 1987 के आरबीआई परिपत्र के खंड 12 की व्याख्या पर आधारित नहीं था, बल्कि यह विशेष रूप से एक सामान्य के रूप में माना गया था। प्रस्ताव, इस प्रकृति की प्राप्तियां पूंजीगत होंगी और इस संबंध में एन.एम. कासलीवाल, जे. और के. रामास्वामी, जे. के दोनों निर्णयों में शामिल होंगी। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि विचाराधीन अवधि के लिए भी, यह निर्णय पूरी तरह से लागू होगा क्योंकि यदि ऐसी प्राप्तियों को आय के रूप में माना जाता है तो यह कंपनी अधिनियम का उल्लंघन होगा। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि अपीलकर्ता-कंपनी के खिलाफ रोक का कोई भी प्रश्न उठाना गलत होगा और इस प्रस्ताव के समर्थन में इस न्यायालय के निर्णयों का हवाला दिया।

6. दूसरी ओर, राजस्व की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री अरिजीत प्रसाद ने श्री गणेश की दलीलों का प्रतिवाद किया। उन्होंने अपने कथन को पुष्ट करने के लिए आयकर आयुक्त (अपील) के आदेशों को प्रचुरता से पढ़ा कि इस मामले के तथ्यों में स्थिति की जमीनी हकीकत यह है कि वास्तव में अपीलकर्ता कंपनी ने स्वयं इन राशियों को आय के रूप में माना है। अगर उसने ऐसा नहीं किया होता, तो वह भविष्य में भुगतान के लिए अपने ग्राहकों का सामना नहीं कर पाता। उन्होंने *राम जानकी देवी* और अन्य बनाम *मेसर्स जुग्गीलाल कमलापत,* (1971) 1 एससीसी 477 के आधार पर यह भी तर्क दिया कि लेनदेन के सही स्वरूप को देखा जाना चाहिए। उन्होंने *पूना इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड, बॉम्बे* बनाम *आयकर आयुक्त, बॉम्बे एआईआर* 1966 एससी 30 का भी हवाला देते हुए कहा कि जमीनी हकीकत को नियंत्रित करना चाहिए न कि केवल सैद्धांतिक विचारों को। इसके अलावा, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार,

पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा) में यह मुद्दा सीधे इस न्यायालय के समक्ष नहीं उठा था और इसलिए, इसमें की गई कोई भी टिप्पणी इस मामले के तथ्यों पर बाध्य नहीं होगी। . इसके अलावा, किसी भी स्थिति में, आयकर आयुक्त (अपील) यह कहने में सही थे कि केवल आरबीआई परिपत्र 1987 से संबंधित यह निर्णय, प्रकृति में संभावित होने के कारण, मौजूदा मूल्यांकन वर्षों पर लागू नहीं होगा।

7. दोनों पक्षों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हमें पहले अपील के तहत अपने फैसले में उच्च न्यायालय द्वारा तीन प्रश्नों के दिए गए उत्तरों को निर्धारित करना चाहिए। दिए गए उत्तर इस प्रकार हैं:

> "10.1 इसलिए, ऊपर चर्चा किए गए सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हमें संदर्भित प्रश्नों का उत्तर निम्नलिखित तरीके से दिया गया है:
>
> > (ए) कि पीयरलेस में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा) ने कानून का कोई पूर्ण प्रस्ताव नहीं रखा है कि मूल्यांकन वर्ष 1985-86 और 1986-87 से संबंधित पिछले वर्ष के लिए निर्धारिती के हाथों सदस्यता की सभी प्राप्तियों को आवश्यक रूप से माना जाना चाहिए पूंजीगत प्राप्तियों के रूप में।
> >
> > (बी) मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, विद्वान न्यायाधिकरण ने आकलन वर्ष 1985-86 और 1986-87 से संबंधित प्रथम वर्ष की सदस्यता को पूंजीगत प्राप्तियों के रूप में मानना गलत था और इसलिए कर योग्य नहीं है। ; और
> >
> > (सी) दूसरे पीयरलेस मामले में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय कि 15 मई 1987 के बाद की गई जमाओं को 1987 के निर्देशों में निर्देशित तरीके से माना जाना था, जहां तक ऐसी जमाओं का संबंध है, सभी लंबित कार्यवाहियों पर लागू होता है। 15 मई 1987 के बाद की अवधि के लिए, विशेष रूप से, निर्धारिती के संबंध में।

8. एक सामूहिक निवेश योजना के तहत बड़े पैमाने पर जनता, और ये सदस्यताएँ कभी भी किसी भी समय जब्त नहीं की गईं। वास्तव में, इस न्यायालय के समक्ष दायर पूरक हलफनामा में इसे एक तथ्य के रूप में बताया गया है, जो कि उच्च न्यायालय के दिनांक 03.09.1979 के अंतरिम आदेश पर आधारित है जो विचाराधीन मूल्यांकन वर्षों के दौरान प्राप्त हुआ था। यह

मामला है, और सरेंडर किए गए प्रमाणपत्र हमारे समक्ष अपील का विषय-वस्तु नहीं हैं, यह स्पष्ट है कि सामान्य सिद्धांतों पर भी, ग्राहकों द्वारा की गई इन निवेश योजनाओं के अनुसार राशि के रूप में जमा राशि जो कभी जब्त नहीं की गई है, केवल पूंजीगत प्राप्तियां बताई गई हैं।

9. पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा) में इस न्यायालय को एक ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ा, जिसमें *आरबीआई ने भारतीय रिजर्व बैंक* बनाम *मामले में इस न्यायालय के पहले के फैसले के अनुसार पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड* और अन्य (1987) 1 एससीसी 424, ने उस फैसले में इस न्यायालय द्वारा उठाई गई चिंताओं को दूर करने के लिए कदम उठाए। उठाए गए कदम भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 45 जे और 45 के द्वारा प्रदत्त शक्तियों के तहत थे, जिसके परिणामस्वरूप आरबीआई द्वारा दिनांक 15.05.1987 को निर्देश जारी किए गए थे। ये निर्देश, बदले में, *पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा)* यानी दूसरे पीयरलेस मामले द्वारा चुनौती का विषय थे। उपरोक्त निर्देश उक्त निर्णय के पैरा 9 में पूर्ण रूप से दिए गए हैं। हम पैरा 12 से चिंतित हैं जो इस प्रकार है:- ===

> “12. प्रत्येक अवशिष्ट गैर-बैंकिंग कंपनी अपने खातों और बैलेंस शीट में देनदारियों के रूप में जमाकर्ताओं को अर्जित या देय ब्याज, बोनस, प्रीमियम या अन्य लाभ के साथ प्राप्त जमा की कुल राशि का खुलासा करेगी।

इस न्यायालय का ध्यान विभिन्न आधारों पर उपरोक्त निर्देशों को चुनौती देने पर था। हालाँकि, इस न्यायालय ने, विशेष रूप से, कासलीवाल, जे. को यह कहते हुए कहा:

> "जमाकर्ताओं द्वारा योगदान की गई राशि एक पूंजीगत रसीद है, न कि राजस्व रसीद, किसी भी परिस्थिति में बैलेंस शीट में इसके अलावा नहीं दिखाई जा सकती है।" पूर्ण मूल्य. इसके अलावा, पूंजीगत रसीद होने के कारण, इसे लाभ और हानि खाते में जमा नहीं किया जा सकता है क्योंकि कंपनी अधिनियम, 1956 की अनुसूची VI के भाग II के लिए आवश्यक है कि लाभ और हानि खाते में दिखाई जाने वाली राशि आय और व्यय तक ही सीमित होनी चाहिए। कंपनी का। इस प्रकार, पहले और बाद के वर्ष की जमा किस्तों का एक हिस्सा लाभ और हानि खाते में जमा करना और उन्हें बैलेंस शीट में देनदारी के रूप में पूरी तरह से न दिखाना कंपनी अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन होगा।'
>
> विद्वान न्यायाधीश आगे कहा गया:

"उपरोक्त व्यवसाय को चलाने में कंपनियों द्वारा अपनाई जाने वाली विधि यह है कि इसके द्वारा प्राप्त सदस्यता का एक निश्चित हिस्सा लाभ और हानि खाते में स्थानांतरित कर दिया जाता है, जिसे आय के रूप में दिखाया जाता है, और उसी का उपयोग भुगतान को चुकाने के लिए किया जाता है। कंपनी की अपरिहार्य कार्यशील पूंजी आवश्यकताएं, अर्थात् एजेंट के कमीशन का भुगतान, प्रबंधन व्यय, कर्मचारियों का वेतन और अन्य ओवरहेड्स। हालाँकि, सब्सक्रिप्शन का शेष (विनियोजित भाग को छोड़कर) प्रत्येक वर्ष एक फंड में स्थानांतरित किया जाता है और फंड के कोष को ब्याज वाले निवेश में निवेश किया जाता है। पीयरलेस कंपनी शुरू में पहले साल के लगभग 95 प्रतिशत सब्सक्रिप्शन को लाभ और हानि खाते में स्थानांतरित करती थी और दूसरे वर्ष से प्राप्त सब्सक्रिप्शन को निवेश करती थी।

के. रामास्वामी, जे. ने एक अलग सहमति वाले फैसले में, उक्त दिशानिर्देशों की चुनौती को भी खारिज कर दिया और ऐसा करते हुए, इस प्रकार कहा:

"जमा या ऋण एक पूंजीगत रसीद है, लेकिन राजस्व रसीद नहीं है और इसका पूरा मूल्य कंपनी की देनदारी के रूप में खाता बही या बैलेंस शीट में दिखाया जाएगा। इसे लाभ-हानि खाते में जमा नहीं किया जा सकता। कंपनी अधिनियम, 1956 की अनुसूची VI के भाग II में कहा गया है कि लाभ और हानि खाते में दिखाई गई राशि कंपनी की आय और व्यय तक ही सीमित होनी चाहिए। इस प्रकार, निर्देशों का पैरा (12) कंपनी अधिनियम के अनुरूप है।"

10. हालांकि यह सच है कि न्यायालय का इस बात पर कोई सीधा ध्यान नहीं था कि प्राप्त सदस्यता प्रकृति में पूंजी या राजस्व है या नहीं, हम अभी भी इस तथ्य पर ध्यान दिया जा सकता है कि इस न्यायालय ने भी, सामान्य सिद्धांतों पर, यह माना है कि ऐसी सदस्यताएँ पूंजीगत प्राप्तियाँ होंगी, और यदि उन्हें आय माना जाता है, तो यह कंपनी अधिनियम का उल्लंघन होगा। इसलिए, यह कहना गलत है, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा कहा गया है, कि पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड (सुप्रा) में निर्णय को कानून के किसी भी पूर्ण प्रस्ताव को निर्धारित नहीं करने के रूप में पढ़ा जाना चाहिए कि सभी प्राप्तियां इन वर्षों के लिए निर्धारिती के हाथों सदस्यता को पूंजीगत प्राप्तियों के रूप में माना जाना चाहिए। हम दोहराते हैं कि हालांकि न्यायालय का ध्यान सीधे तौर पर इस पर नहीं था, फिर भी, इस न्यायालय द्वारा सुनाया गया एक फैसला, भले ही इसे कड़ाई से निर्णय का अनुपात निर्णय नहीं कहा जा सकता

है, निश्चित रूप से उच्च न्यायालय पर बाध्यकारी होगा। अन्यथा भी, जैसा कि हमने कहा है, यह स्पष्ट है कि सामान्य सिद्धांतों पर भी ऐसी सदस्यता को संभवतः आय के रूप में नहीं माना जा सकता है। श्री गणेश यह कहने में सही हैं कि इस प्रकृति के मामलों में केवल निर्धारिती के खातों के हाथों में ऐसी सदस्यता के उपचार से जाना संभव नहीं होगा। इस संबंध में, उन्होंने *आयकर आयुक्त* बनाम *सहारा इन्वेस्टमेंट इंडिया लिमिटेड* में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के फैसले का हवाला दिया, जिसे वॉल्यूम 266 आईटीआर पेज 641 के रूप में रिपोर्ट किया गया था, जिसमें डिवीजन बेंच ने पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी का अनुसरण किया था। लिमिटेड (सुप्रा), और फिर इस प्रकार आयोजित किया गया:

> *"पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड बनाम भारतीय रिज़र्व बैंक (*1992) 75 कॉम्प कैस 12 में, सुप्रीम कोर्ट ने इसी तरह के तथ्यों पर माना कि जमा राशियाँ थीं पूंजीगत प्राप्तियाँ और राजस्व प्राप्तियाँ नहीं (उपरोक्त निर्णय के पैराग्राफ 67 और 68 के अनुसार)। वह मामला भी एक वित्त कंपनी से संबंधित है जो जमा एकत्र करती थी, और अपनी जमा राशि का कुछ हिस्सा लाभ और हानि खाते में जमा करती थी, जैसा कि वर्तमान मामले में है। इसलिए, हमारी राय में, उक्त निर्णय का अनुपात, इस मामले पर भी लागू होता है।
>
> यह आयकर कानून में अच्छी तरह से तय है कि बहीखाता प्रविष्टियाँ प्रविष्टियों की वास्तविक प्रकृति के बारे में निर्णायक या निर्धारक नहीं हैं जैसा कि आयोजित किया गया है सीआईटी बनाम इंडिया डिस्काउंट कंपनी लिमिटेड [1970] 75 आईटीआर 191 और गोधरा इलेक्ट्रिसिटी कंपनी लिमिटेड बनाम सीआईटी [1997] 225 आईटीआर 746 (एससी) मामले में सुप्रीम कोर्ट। उन निर्णयों में यह माना गया है कि अदालत को प्राप्तियों की वास्तविक प्रकृति को देखना होगा और केवल खाते की पुस्तकों में प्रविष्टि पर नहीं जाना होगा।
>
> हम ट्रिब्यूनल से सहमत हैं कि ये जमा वास्तव में पूंजीगत प्राप्तियां हैं, राजस्व नहीं रसीदें चौरंगी सेल्स ब्यूरो पी. लिमिटेड वी. सीआईटी [1973] 87 आईटीआर 542 (एससी) में जिसका पालन सिनक्लेयर मरे एंड कंपनी पी. लिमिटेड वी. सीआईटी [1974] 97 आईटीआर 615 में किया गया, सुप्रीम कोर्ट ने देखा (पेज 619)):
>
> "यह रसीद की वास्तविक प्रकृति और गुणवत्ता है, न कि वह शीर्ष जिसके तहत इसे खाता पुस्तकों में दर्ज किया गया है, जो निर्णायक साबित होगा। यदि कोई रसीद एक

व्यापारिक रसीद है, तो यह तथ्य कि यह निर्धारिती की खाता पुस्तकों में नहीं दिखाया गया है, मूल्यांकन प्राधिकारी को इसे व्यापारिक रसीद के रूप में मानने से नहीं रोकेगा।

यह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा माना गया है कि प्राथमिक देनदारी और यह साबित करने की जिम्मेदारी विभाग की है कि एक निश्चित रसीद पर परिमिसेट्टी सीतारमम्मा बनाम सीआईटी [1965] 57 आईटीआर 532 (एससी) के तहत कर लगाया जा सकता है।

श्री चोपड़ा ने सीआईटी में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर भरोसा किया। बनाम लक्ष्मी विलास बैंक लिमिटेड [1996] 220 आईटीआर 305। हमारी राय में वह निर्णय इसलिए भी अलग है क्योंकि उस मामले में जमा राशि जब्त कर ली गई थी और लेनदेन का परिणाम यह हुआ कि बैंक सुरक्षा और पड़ी राशि का पूर्ण मालिक बन गया। इसके पास जमा राशि इसका अपना धन बन गई। वर्तमान मामले में ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकला है कि जमा राशि जब्त कर ली गई थी या लेनदेन के अंत में सुरक्षा जमा निर्धारिती की संपत्ति बन गई थी या जो पूंजीगत रसीद से राजस्व रसीद में बदल गई थी।

इसलिए, वह निर्णय स्पष्ट रूप से अलग है। इस न्यायालय ने 21.07.2015 को उक्त निर्णय के विरुद्ध अपील में निम्नानुसार निर्णय दिया:

“उच्च न्यायालय के फैसले को पढ़ने के बाद, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के फैसले पर सही भरोसा किया है "पीयरलेस जनरल फाइनेंस एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी लिमिटेड और अन्य। वी भारतीय रिज़र्व बैंक” (1992) 2 एससीसी 343. चूंकि मामला है फैसले में पूरी तरह से कवर किया गया है, हमें इसमें कोई योग्यता नहीं दिखती है ये अपीलें और याचिकाएं तदनुसार खारिज की जाती हैं।"

यह कहना भी सही है कि a के विरुद्ध कोई रोक नहीं हो सकती कानून में स्थापित स्थिति [आयकर आयुक्त, बॉम्बे बनाम देखें। सी. पारख एंड कंपनी (इंडिया) लिमिटेड 29 आईटीआर 661 एट 665 और कमिश्नर आयकर विभाग, मद्रास बनाम वी.एम.आर.पी. फर्म, मुआर (1965) 56 आईटीआर 67].

11. राजस्व की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री अरिजीत प्रसाद ने, हालांकि, राम जानकी देवी और अन्य बनाम मैसर्स में टिप्पणियों पर दृढ़ता से भरोसा किया। जुग्गीलाल कमलापत, (1971) 1 एससीसी 477। विशेष रूप से, उन्होंने फैसले के पैराग्राफ 12 पर भरोसा किया जो इस प्रकार है: -

"जमा का मामला केवल धन के ऋण से कहीं अधिक है। यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा कि लेनदेन धन जमा करने के चरित्र से जुड़ा है या नहीं। आस-पास की परिस्थितियाँ, लेन-देन का संबंध और चरित्र और जिस तरीके से पार्टियों ने लेन-देन का व्यवहार किया, वह लेन-देन के वास्तविक स्वरूप पर प्रकाश डालेगा।

12. इस निर्णय का वर्तमान मामले के तथ्यों से कोई सीधा संबंध नहीं है। उस मामले में पेचीदा सवाल यह था कि क्या विचाराधीन लेन-देन ऋण था या जमा। यह उस संदर्भ में था कि अनुच्छेद 12 में कहा गया था कि धन के ऋण को जमा कहा जा सकता है या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों, आसपास की परिस्थितियों आदि को ध्यान में रखते हुए निर्भर करेगा। वर्तमान मामले में, ऐसा कोई प्रश्न नहीं उठाया गया है राजस्व द्वारा. उठाया गया प्रश्न पूरी तरह से अलग है, और जैसा कि हमने ऊपर माना है, लेन-देन का चरित्र स्पष्ट रूप से निर्धारिती के हाथों में एक पूंजीगत रसीद है, जिस पर संभवतः करदाता के हाथों में आय के रूप में कर नहीं लगाया जा सकता है।

13. श्री प्रसाद ने पूना इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड, बॉम्बे बनाम आयकर आयुक्त, बॉम्बे सिटी I, बॉम्बे, एआईआर 1966 एससी 30 में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया। विशेष रूप से, उन्होंने एक उद्धरण पर भरोसा किया। बॉम्बे उच्च न्यायालय का एक निर्णय, जिसे इस न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया था, इस प्रकार है: -

== "वास्तविक आय के सिद्धांत को अधीन नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि प्रबंधन एजेंसी के संबंध में समर्पण या रियायत या छूट के मामले में यह वास्तव में नकारने जैसा है।" कमीशन वाणिज्यिक औचित्य के आधार पर बनाया जाता है, सहमति दी जाती है या दिया जाता है, सिर्फ इसलिए कि यह एक लेखा वर्ष की समाप्ति के कुछ समय बाद होता है। इस प्रकृति के किसी भी लेन-देन और स्थिति की जांच करते समय अदालत को इसके विशुद्ध सैद्धांतिक या सैद्धांतिक पहलू के बजाय स्थिति की वास्तविकता और विशिष्टता पर अधिक ध्यान देना होगा। यह समग्र रूप से देखे गए मामले के व्यावसायिक पहलू पर अधिक जोर देगा जब वैधानिक भाषा की उपेक्षा किए बिना ऐसा किया जा सकता है।

वर्तमान लेनदेन का "सैद्धांतिक" पहलू यह तथ्य है कि निर्धारिती ने सदस्यता प्राप्तियों को आय के रूप में माना है। हालाँकि, स्थिति की वास्तविकता यह है कि मामले का व्यावसायिक पहलू, जब समग्र रूप से देखा जाता है, तो अनिवार्य रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि विचाराधीन प्राप्तियाँ पूंजीगत प्राप्तियाँ थीं, न कि आय।

14। परिस्थितियों में, हम निर्धारित करते हैं उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द करें और आयकर अपीलीय न्यायाधिकरण को बहाल करें। अपील स्वीकार की जाती है. लागत के रूप में कोई आदेश नहीं किया जाएगा।

विभूति भूषण बोस अपील की अनुमति.

आशीष तिवारी की देखरेख में मानसी मिश्रा द्वारा अनुवादित।